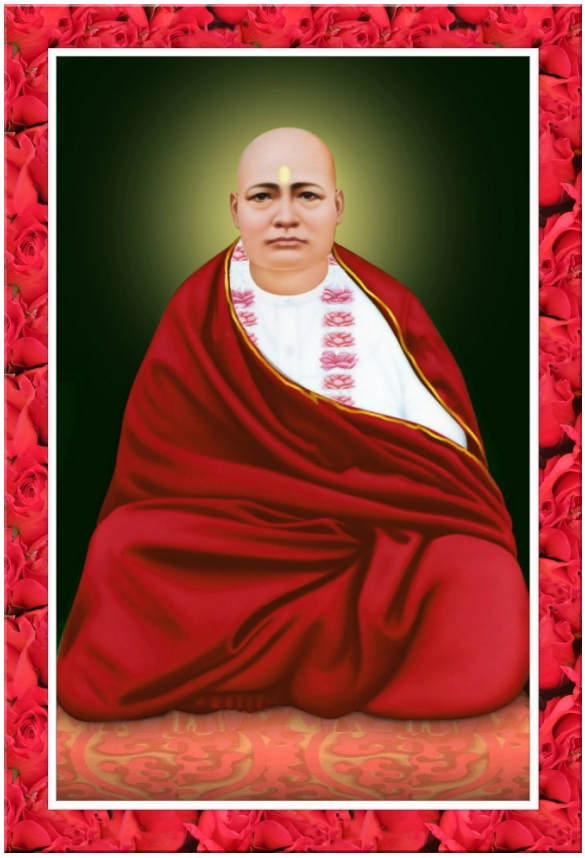

श्री श्री १००८ श्री स्वामी अद्वैतानन्द जी महाराज परमहंस

संतमत के इस क्रम के प्रथम सद्गुरु परमहंस अनामी पुरुष, भक्त कल्पतरु, तपोनिधि स्वामी श्री अद्वैतानन्द जी हैं, जिन्हें श्रीदयालजी महाराज अथवा दादा गुरु के नाम से भी जाना जाता है। श्रीदयालजी महाराज को जन्म देने वाले माता-पिता की मृत्यु उनके बचपन में ही हो गयी थी और, उनका लालन-पालन बाद में उनके पिता के मित्र लालाजी और उनकी पत्नी ने किया। दादा-गुरुदेव ब्रम्हनिष्ठ श्री श्री १००८ स्वामी अद्वैतानन्द जी महाराज ने केदारघाट वाराणसी वाले परमहंस बाबाजी से आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त किया। केदारघाट वाराणसी वाले परमहंस बाबाजी अपने शिष्य "दयाल महाराज" को “हापू बाबा” के नाम

से पुकारते थे और, समय-समय पर उन्हें आध्यात्मिक शिक्षायें देते रहते थे। श्री अद्वैतानन्द जी को उनके गुरुदेव केदारघाट वाराणसी वाले परमहंस बाबाजी ने यह निर्देश दिया कि वे माता-पिता के प्रति अपने कर्तव्यों को निभाने के पश्चात्, निर्भय रूप से विचरण करते हुए जगत् का कल्याण करें। ऐसी आज्ञा देकर केदारघाट वाराणसी वाले परमहंस बाबाजी वहाँ से चले गए, तदुपरांत दोनों महापुरुषों की भेंट का उल्लेख नहीं मिलता है। लालाजी और, उनकी पत्नी की मृत्यु के पश्चात् श्रीदयालजी अपने गुरु के निर्देशानुसार, घर त्यागकर अपनी साधना एवं जगत् के कल्याण हेतु निकल पड़े। प्रारंभ के १७ वर्षों तक श्रीदयालजी महाराज जंगलों में अथक रूप से आध्यात्मिक साधनायें करते रहे। तदुपरांत ब्रह्मज्ञानी श्री दयाल जी महाराज, लोगों के बीच जाकर, पराज्ञान के प्रचार-प्रसार द्वारा निरंतर मानवता की सेवा में ही जुटे रहे। इस दौरान उनकी मुलाकात एक उच्च कोटि के संत श्री आनंदपुरी जी से हुई। अनेक संदर्भों में दोनों के बीच आध्यात्मिक-चर्चाओं का उल्लेख आता है। श्री आनंदपुरीजी के गुरु श्री तोतापुरीजी थे, जो आदि-शंकराचार्य के सतनामी/दशनामी संप्रदाय के एक दिगंबर परिव्राजक थे। श्री आनंदपुरी जी ने श्री दयाल जी महाराज को अपना आध्यात्मिक उत्तराधिकारी घोषित किया। हालांकि श्रीदयालजी महाराज ने श्री आनंदपुरी जी के आश्रम की व्यवस्था कुछ कुशल संतों को सौपकर अपना शेष जीवन गाँव-गाँव और, शहर-शहर जाकर ज्ञान के प्रचार-प्रसार में हीलगाया। एक बार टेरी के दीवान, भगवानदास के आग्रह पर श्रीस्वामीजी टेरी पधारे। वहीं सत्संग में आये एक बालक को देखकर उन्होंने कहा कि- "आ गये भैया", और उसका हाथ पकड़कर आप फरमाने लगे कि, "इसी हस्ती से मिलने के लिए ही हमारा यहाँ आना हुआ है।" वही बालक हमारे प्राणधन, श्रीमत्परमहंस श्रीस्वामी स्वरूपानंद जी के नाम से विख्यात हुए। वास्तव में, यह भेंट उस समय के दो युग महापुरुषों की भेंट थी।

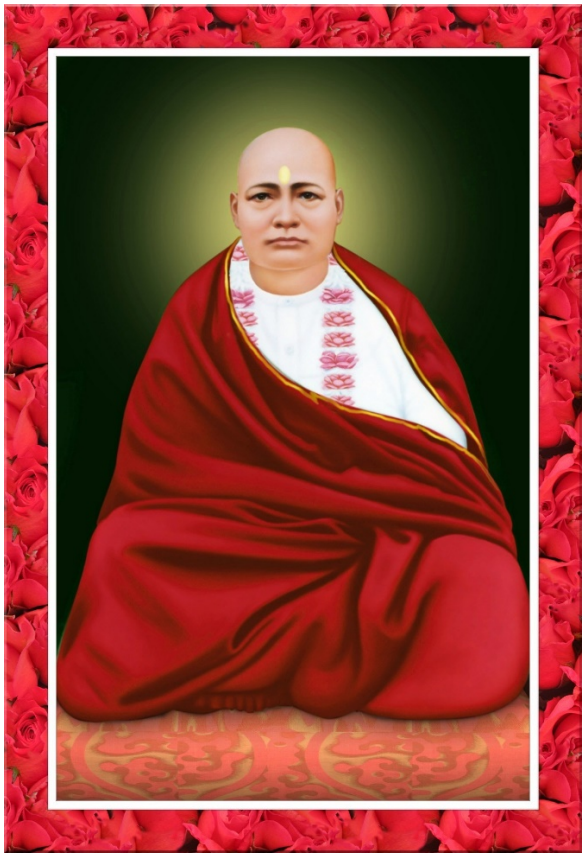

Swāmī Śrī Advaitānand Jī Mahārāj Paramahansa

The first *Satguru* of this order, the embodiment of light divine who started this tradition of imparting of the metaphysical knowledge (*Parā Vidyā*) was Swāmī Advaitānand Jī Mahārāj (also known as Śrī Dayāla Jī /Dādā-guru). His mother and father departed from this world in his early age, and he was brought up subsequently by his father's close friend Lālā Jī. Śrī Dayāla Jī received his illumination from Paramhans Jī of Kedārghāṭ, Vāraṇāsi. The record of His whereabouts has remained untraceable. Paramhans Jī of Kedārghāṭ, used to deliver spiritual teachings to Śrī Śrī Dayāla Jī very affectionately and address Him by the name "Hāpu-Bābā". He instructed Śrī Dayāla Jī that, once your

duties towards you mother and father are completed, go fearlessly for your divine mission of spreading the spiritual knowledge to the people for their welfare. This was the last instruction by Śrī Paramhans Jī of Kedārghāṭ to Śrī Dayāla Jī, and they never met thereafter. Śrī Dayāla Jī left home for his divine mission, as per the instruction of his guru, only after serving Lālā Jī and his wife up till their death. After 17 years of rigorous penance in forest and realizing the Brahma within, He devoted his remaining life in propagation of spirituality. In few articles, there are references regarding the meetings and spiritual discussions between Śrī Dayāla Jī and Śrī Ānandapurī Ji mahārāj. Śrī Ānandapurī Ji was the disciple of Śrī Totāpuriji mahārāj, who was a *siddha* (Perfect) Parivrājaka (Wandering monk) belonging to *Satanāmī /Daśanāmī Sampradāya* of Ādi Śankarāchārya). Śrī Ānandapurī Ji declared Śrī Dayāla Jī as his spiritual successor. Śrī Dayāla Jī entrusted the service of Śrī Ānandapurī's Āśram to old prominent disciples, and got Himself free for service of humanity.

Śrī Bhagwan Das, Dewān of Ţerī, once prayed to Śrī Paramahansa Dayāla Jī to visit his home place. Accordingly in the year 1904 Śrī Paramahansa Dayāla Jī accompanied by Dewān Bhagwān Das Jī came to Ţeri. One day during His spiritual discourses at Ţeri, He looked at a little boy affectionately and said, '*Āa gaye Bhaiyā'* (so you have come, my dear) and by holding his hand he continued "I have come here only to meet you". The name of this little boy was Belīrām. He was initiated by Śrī Paramahansa Dayāla Jī, and was named later as Śrī Śrī 1008 Śrī Swarupānanda Jī, the "Second Master" of *Advait-Mat*. It seemed as if a disciple had found out the Perfect Master. Indeed it was a meeting of two Great Souls, the two Great Saints of the age.